SANATANODAYA सनातनोदय
ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित कर्मयोग

डॉ. अर्चना त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग
पी. एस. जी. कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइंस, कोयम्बत्तूर तमिलनाडु

समस्त भारतीय वाङ्मय में श्रीमद्भगवदगीता की जैसी प्रतिष्ठा है वैसी किसी अन्य ग्रंथ की नहीं होगी। यह भारतीय चिन्तन प्रक्रिया, भारतीय जीवनादर्श, भारतीय संस्कृति के आधारभूत मूल्यों को जितनी स्पष्टता से प्रस्तुत करती है वैसी स्पष्टता अन्यत्र प्रायः उपलब्ध नहीं होती। वस्तुतः इसे किसी धर्म विशेष या काल विशेष की सीमा में बाँधा नहीं जा सकता । यह अपने स्वरूप में लगभग पूरी तरह देशकाल निरपेक्ष है। इसका सम्बन्ध मानवीय जीवन में अनिवार्यतः उपस्थित होने वाले जीवन संघर्ष और करणीयाकरणीय की समस्या से है अतः यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी है चाहे वह किसी भी देश, काल व जाति का हो । यदि गहराई से देखा जाये तो इसका कारण है गीता के उपदेशों का वह तत्त्व जो आज तक सभी देशों और कालों में इसलिये खरा उतरता रहा है, क्योंकि उसमें मानव जीवन को हर दृष्टि से खरी उतरने वाली व्यावहारिक शिक्षा को देने वाला चिन्तन निहित है। इस चिन्तन की विशेषता यह है कि इसने कोई नया मार्ग या पंथ नहीं चलाया बल्कि जिस समय गीता लिखी गयी उस समय तक इस देश में चल रही समस्त दर्शन शाखाओं का सार लेकर उनका मानव जीवन के लिये उपयोगी ऐसा समन्वय कर दिया गया कि तब से लेकर आज तक इस देश को किसी दूसरे दर्शन की आवश्यकता नहीं पड़ी। यदि यह पूछा जाये कि इस गीता की सबसे अधिक उल्लेखनीय बात क्या है या इसकी सबसे बड़ी देन क्या है, तो एक वाक्य में यह निःसंकोच कहा जा सकता है, कि वह है गीता का निष्काम कर्मयोग।

कर्मयोग में दो शब्द हैं- कर्म और योग। कर्म शब्द डुकृञ करणे धातु से मनिन प्रत्यय लगकर निष्पन्न है, जिसे गीता में कर्तव्य कर्म के रूप में संग्रहीत किया गया है। कर्म करते रहना जीने के तरीकों में सर्वोत्तम है कर्म से ही संसार का संचालन होता है। जहाँ कर्म है वहाँ गति है, गति से ही जीवन है। जहाँ कर्तव्य कर्म है वहाँ दुखों का अभाव है। कर्मठ होने से ही सुख है। गीता में वर्णित कर्म मुख्यतः अनासक्तभाव (फल के प्रति) तथा लोकसंग्रहार्थ किए गए कर्म हैं जहाँ कर्म करने का अधिकार मानव को है कर्मफल का नहीं। [1]

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

द्वितीय पद योग युज् धातु से घञ् प्रत्यय लगकर निष्पन्न हुआ है जिसका विशदार्थ है 'कर्मों का सर्वाधिक उपयुक्त रूप'।[2] कर्मानुष्ठान का वह मार्ग जहाँ सांसारिक कर्मों का परित्याग न करने के पश्चात् भी कर्ता पाप आथवा भावबन्धन में नहीं फँसता,[3] वही योग कहा जाता है। गीता में निरूपित समस्त आसक्ति (सपृहा, सुख दुख आदि द्वन्द भाव, घृणा इत्यादि) का परित्याग, फलविषयिणी सिद्धि और असिद्धि में समत्व भाव ही योग है।[4] भगवान् भाष्यकार शंकराचार्य भी योग को कर्मस्वरूप ही स्वीकार करते हैं।[5] गीता में चाहे कर्म मार्ग का विवेचन किया गया हो अथवा भक्ति मार्ग का, उन सबक मूल में यही योग प्रतीत होता है। गीता में योग की परिभाषा यह की गयी है, कि कर्म ही करते रहा जाये उसके बन्धन में न बंधा जाये, यह विधि या टेक्नीक या जीवन जीने की कला ही योग है। योगः कर्मसु कौशलम्।[6] इस कला का इस योग का सूत्र भी बताया गया 'कर्मण्येवाधिकाररते मा फलेषु कदाचन'[7] कर्म करते रहो फल की इच्छा न करो। यही कर्मयोग है। पर ऐसी कठिन सिद्धि हो कैसे? व्यावहारिक दृष्टि से इसी कर्मयोग की साधना के अनेक सरल उपाय गीता में बतलाये गये हैं। जो ज्ञानी हैं, उन्हें कहा गया है, कि इस प्रकार का आत्मचिन्तन कर एक आत्मानुशासन पैदा करो कि आत्मा अविनाशी है मृत्यु केवल उसका चोला बदलना ही है।[8] शरीर क्षणभंगुर है और यह समस्त जगत् भी क्षणिक है। तुम्हारी स्वयं की सत्ता इस जगत् में समुद्र में बूँद की भाँति ही है। ऐसे पुरुष, अनन्त देशों और अनन्त कालों में घूमते और कर्म करते रहे हैं, अकेले तुम ही नहीं हो यही रहस्य है कृष्ण के विराट रूप दिखाने का। हमारा जो ब्रह्माण्ड है, वैसे अनेक ब्रह्माण्ड उस विराट पुरुष में समाये हुए हैं। हमारे जैसे अनन्त व्यक्ति, अनन्त ऐश्वर्यशाली राजा और अनन्त सम्पत्तिशाली धनिक कीड़े की तरह आते जाते रहते हैं। यह सब आत्मचिन्तन आपको अपने अहंकार से अपने घर बार से, धन-सम्पत्ति से, अधिक ममत्व नही होने देगा। इस प्रकार के आत्म चिन्तन को "प्रज्ञा प्रतिष्ठित करने की प्रक्रिया बतलाया गया है। स्थितप्रज्ञ या प्रज्ञाशील होने के बाद व्यक्ति कर्मबन्धन से भयभीत नहीं होता। सारे सांसारिक कुकर्म लालसा या तीव्र इच्छा से होते हैं। इनका बहुत स्पष्ट दुष्चक्र बताया गया है। काम यानि इच्छा के पूर्ण न होने से क्रोध, क्रोध से मतिभ्रम और उस मतिभ्रम से बुद्धिनाश या अन्य अनेक कुकर्म करने की प्रेरणा और अन्त में विनाश। इन सबसे बचने का उपाय ही तो है अनासक्ति। सामान्य कर्मयोगी को भक्ति , अनासक्ति के लिये इन्द्रियों को अपने- अपने विषयों में तीव्र इच्छा न रखने का प्रशिक्षण देना होता है। यदि हम यह माने कि हमारे नियन्ता ने नाटक के सूत्रधार की तरह हमें कुछ नियत कर्म करने के लिये भेजा है, वह करके हमें वापस लौटना है, उनके करने मात्र के लिये हमें जीना है, तो इन्द्रियविषयों में राग की भावना नहीं होगी ।

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

सारे मनुष्य सारे प्राणी, अपनी- अपनी नियत भूमिका अदा कर रहे हैं, इसलिये न कोई छोटा है न बड़ा, न कोई प्रेमी न द्वेषी। इस समत्व योग में हममें द्वेष नहीं होगा, आग्रह नहीं होगा [9] किसी बात को हम 'प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं बनायेंगे। किसी बात को प्रतिष्ठा का, प्रश्न बना लिया और वह न बनी तो कितना खेद, दुख होगा, यदि कोई वस्तु सामान्य रूप से न मिली तो कितना दुःख होता है? किसी पद के लिये खेल ही खेल में आवेदन कर दिया और साक्षात्कार के बाद वह न मिला तो कोई विशेष कष्ट नहीं होता। तीव्र आसक्ति का त्याग ही कर्मयोग है, जीवन की वह कला है, जिससे मनुष्य जीवनमुक्त हो सकता है। केवल पहाड़ों की गुफाओं में बैठकर ही तपस्या की जा सकती हो ऐसी बात नहीं, जीवन में तन-मन और वाणी से तपस्या की जाती है । किसी को पीड़ा पहुँचे इसका ध्यान रखना, कम बोलना और किसी के प्रति दुर्भाव न रखना मानस तप है। इसी प्रकार सात्विक भोजन और नियमित आहार-विहार इन सबका संतुलित मार्ग कर्मयोगी के लिये बतलाया गया है। जिन्हें इस प्रकार के चिन्तन और मानसिक अनुशासन का पात्र नहीं समझा गया, उनके लिये एक सरल मार्ग भी बतलाया गया, जिसे भक्ति मार्ग कहा जा सकता है। यदि प्रयत्न करने पर भी ममता और लालसा नहीं छूट रही हो, तो अपने आराध्य के प्रति इतने समर्पित हो जाओ, कि यह सब उनका है- यह मानकर चलो। सब धर्मों को छोड़ दो और ईश्वर की शरण में चले जाओ[10] शरणागति और भक्ति का यह सिद्धान्त भी उसी अनासक्ति के जीवन-दर्शन का एक सरल पक्ष है। अपना सब कुछ उसका ही है, यह मानते ही अपनी वस्तुओं के प्रति आसक्ति क्या कम नहीं होगी? मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त करूँगा, तुम्हारा योगक्षेम मैं वहन करूँगा, कृष्ण की ये सब घोषणाएँ इसी हेतु हैं, कि व्यक्ति पाप के भय से कर्म से विरत न हो किन्तु साथ ही साथ अपने सांसारिक स्वार्थ के कारण कर्म न कर अपने आराध्य के लिये कर्म करें।

गीता के कर्म योग की इस कला के अनेक व्यावहारिक पक्ष हैं, जो आज की परिस्थितियों में बहुत सटीक बैठते हैं। आज हम बहुधा अपने कार्य की ओर देखते हैं और यह सोचते हैं, कि मैं यह काम उससे अधिक अच्छा कर सकता हूँ।या इस कार्य से मुझे अधिक लाभ है। अनेक संकट इसी से पैदा होते हैं। गीता ने कहा है कि जो काम तुम्हारे लिये नियत किया गया है, उसे तुम सर्वांगपूर्ण न कर पाओ और दूसरे के काम के लिये तुम्हें लगे कि तुम अधिक अच्छा कर पाओगे तो भी वैसा करने का प्रयत्न न करो। स्वधर्म का आचरण ही हर दृष्टि से श्रेष्ठ है।[11] परधर्म का आचरण, चाहे वह कितना ही अच्छा किया जा सकता हो, नहीं करना चाहिये ।

इस प्रकार गीता व्यक्ति के कर्तव्य कर्म पालन करने में दत्तचित्त रहने और किसी प्रकार के कर्म फल की इच्छा न रखने और निष्काम कर्म को अपने जीवन का आदर्श बनाने का आदेश देती है। निष्काम कर्म

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

योग को अनासक्तियोग भी कहा जाता है। गीता मानवीय मूल्यों व नैतिक आदर्शों का अमूल्य स्रोत है। शिक्षा के साथ-साथ आध्यात्मिक पक्षों पर भी बल दिया गया है। यह सत्य के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है। वास्तव में श्रीमद्भगवतगीता का महात्म्य वाणी द्वारा वर्णन करने के लिए किसी की भी सामर्थ्य नहीं है क्योंकि यह एक परम रहस्य ग्रन्थ है। भगवान के गुण प्रभाव मर्म का वर्णन जिस प्रकार गीता में किया गया है वैसा अन्यत्र. नहीं व मिलता।

गांधी जी ने सारे जीवन में सत्य का प्रयोग गीता के कर्मयोग के पदचिह्नों पर किया। उन्होंने कहा था मुझे गीता में अपनी हर समस्या का समाधान मिलता है। तिलक ने इसी कर्मयोग को देश के लिये अद्भुद प्रेरणा देने वाली शंखध्वनि बतलाया है। यही निष्काम कर्मयोग या अनासक्ति योग गीता की सबसे बड़ी देन है, जो हजारों वर्षों से करोड़ों व्यक्तियों को सही जीवन जीने की कला सिखाती आयी है। वर्तमान में समाज की सबसे बड़ी बुराई भ्रष्टाचार बन चुका है। इसका मूल कारण कर्मफल का अहंभाव ही है। मेरे इस कार्य के परिणाम स्वरूप "मेरे पास इतना धन होगा 'मेरी सत्ता बढ़ जायेगी आदि विचार अहंभाव के कारण ही आते हैं। समाज में व्याप्त व्याधियों, अवसाद, रक्तचाप, हृदयरोग (सर्वेक्षण के अनुसार ये विश्व में सर्वाधिक लोगों में है) का मूल कारण भी निष्काम कर्मयोग से दूर रह कर फल की कामना से उपजी कुण्ठा, क्रोध आदि ही है। गीता के इस मन्त्र निष्काम कर्मयोग का अनुसंधान कर निश्चय ही समाज की बुराइयों, व्याधियों को दूर कर सामाजिक, आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है।

सन्दर्भ:

1. कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्म फलहेतुर्भूमा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि।-गीता 2 / 47.
2. बुद्धियुक्तो जहातीह उमे सुकृत दुष्कते।
तस्माद्योगाययुज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्। । -गीता-2/ 50.
3. नेहाभिक्रमनाशोस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात। |-गीता-2/ 40
4. योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्तवा धनंजय।
सिद्धय सिद्धयोः समो भूत्वा समत्वंयोग उच्यते। ।- गीता-2 / 48.
5. योगं सम्यग्दर्शनोपायकर्मानुष्ठानम्- गीता-4/ 42 पर शांकरभाष्य
6. गीता-2/ 50.
7. गीता-2/47
8. वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि

ISSN (O) : 3048-9318
Vol. 1, No. 1, Year 2024
Available Online : https://sanatanodaya.com/

तथा शरीराणि विहाय जीरणान्यन्यानिसंयाति नवानि देही ।--गीता-2 / 22

9. यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्त्प्राप्यशुभाशुभम्।

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता । ।|- गीता-2 / 57.

10. सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।- गीता-18 / 66.

11. श्रेयान्स्वधमोविगुणः परधमात्स्नुष्ठितात् ।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मोभयावहः ||--गीता-3/ 35.